उपन्यासकार वृन्दावनलाल वर्मा और लोक-जीवन

डॉ. प्रेमसिंह के. क्षत्रिय
अध्यापक अहमदाबाद

उपन्यास 'शब्द', 'उप' तथा न्यास के योग से निष्पन्न है । 'उप' उपसर्ग शब्दो के पूर्व आकर समीपता गौणता आदि अर्थो की विशेषताएं उत्पन्न करता है । 'उपन्यास' शब्द के अनेक अर्थो में एक है, 'स्थापना करना', 'रखना'। इस प्रकार उपन्यास का अर्थ हुआ 'सामने रखना'। संस्कृत में 'उपन्यास' शब्द किसी अर्थ को युक्ति-युक्त रूप में उपस्थित करने के लिए भी प्रयुक्त होता रहा है । परन्तु हिन्दी में प्रयुक्त 'उपन्यास' शब्द साहित्य की एक विधा विशेष का द्योतक है । यह अंग्रेजी का पर्यायवाची शब्द नॉबिल है, जिसका अर्थ नवीन से है । इसमें लेखक पाठकों के समक्ष कथात्मक संसार की स्थापना नए ढंग करता है । इसी कारण 'उपन्यास' को 'उप' (लघु) जगत् की स्थापना कहा गया है ।

वृंदावनलाल वर्मा को जन्म 9 जनवरी 1889 को मऊरानी गाँव के झाँसी जिले में हुआ था । वर्माजी ने बुंदेलखण्ड से सम्बन्धित साहित्य सर्जन किया । वर्मा जी ने ऐतिहासिक उपन्यास, सामाजिक, उपन्यास, कहानी, संस्मरण आत्मकथा एवं यात्रा वृत्तांत भी लिखे, इस प्रकार हिन्दी साहित्य जगत को अपनी रचनाओं के माध्यम से महत्त्वपूर्ण योगदान दिया । वर्मा का देखसात 23 फरवरी 1969 को हुआ । वर्माजी को पद्यमभूषण, आगरा विश्वविद्यालय द्वारा डी.लिट्. की उपाधि से सम्मानित किया गया था ।

उपन्यास साहित्य की सशक्त विधा है जिसकी पहुंच जीवन की गहराइयों तक है । जीवन की गहनता और विविधता में ही उपन्यास की रोचकता का मर्म छिपा है । इसीलिए उपन्यास की मानव-जीवन का चित्र, उसकी आलोचना एवं व्याख्या कहा गया है । कहा जा चुका है कि मानव-जीवन के दो चरण है – शिष्ट जीवनतथा लोक-जीवन । शिष्ट-जीवन तथा लोक-जीवन । शिष्ट-जीवन मानव पर स्वतः आरोपित जीवन कहा गया है । यह विज्ञान की देन है । धीरे-धीरे इसके एक रस हो जाने के कारण उपन्यासकार अपनी रचना में नवीनता लाने के लिए लोक-जीवन की ओर मुड़ता है । वातावरण अथवा देश-काल के माध्यम से वह लोक-जीवन की अभिव्यक्त करता है । वह कथा में स्थानीय रंग भरने के लिए स्थानीय भौगोलिक वर्णनों तथा वहां की लोक-माला का प्रयोग करता है । उसके कथ्य, कथा तथा चरित्र सम्बन्धी तत्व सामान्य रहते है । वे स्थान विशेष से सम्बद्ध न होते हुए भी स्थानीय रंगत के चोखटे में सजा दिए जाते हैं । यहाँ उपन्यासकार साधारण जीवन को विशिष्ट भू-खण्ड भर में प्रस्तुत करता है ।

वृन्दावनलाल वर्मा के उपन्यासों का सम्बन्ध उनकी जन्मभूमि बुन्देलखण्ड से है । लेखक की अपनी जन्मभूमि के प्रति गहन आत्मीयता है । उनके ऐतिहासिक तथा सामाजिक उपन्यासों में बुन्देलखण्डी लोक-समाज का सजीव एवं स्वाभाविक चित्रण किया गया है । नागरिक सभ्यता, सविधि शिक्षा, बाह्य सजावट तथा औपचारिकताओं से दूर, अपनी परम्परागत आदिम मनोवृत्तियों से

दूर, अपनी परम्परागत आदिम मनोवृत्तियों से जुड़े हुए, प्रकृति की गोद में अत्यधिक सादा, सरल, स्वच्छन्द, सरल, स्वच्छन्द एवं स्वाभाविक जीवन जीने वाले यहां के 'लोक' के जीवन के विविध रूप उनके विभिन्न रीति-रिवाजों, उनकी चिन्तन-लिधि, मनोरंजन के मनोरंजन के विविध साधनों तथा भाषा में प्रकट हुए हैं ।

बुन्देलखण्ड अपनी प्रकृति-भी के लिए प्रसिद्ध है । प्रकृति के सुरम्य वातावरण के रहते हुए यहाँ के 'लोक' का जीवन इसे अत्यधिक प्रभावित है । प्रकृति मानवेतर तत्व है । यह मानव की चिर सहचरी है । अपनी सहजता तथा स्वाभाविकता से यह उसे सहज एवं सशक्त बनाती है । वृन्दावनलाल वर्मा के उपन्यासों में प्रकृति के विभिन्न उपकरणों – षड्ऋतु, दिन के विभिन्न प्रहर, सूर्य, चन्द्रमा, नदी, पर्वत, वन-वक्ष, पशु-पक्षी आदि का देश-कालके शोध, पात्रों के रूपाकार तता भावाभिव्यक्ति के लिए प्रयोग किया गया है । प्रकृति के स्थिर एवं गतील चित्र भौगोलिक स्थितियों तथा देश-काल का बोध कराते हुए पात्रों के साथ मिलकर तदरूप हो गए हैं । पात्रों की मानसिकता के अनुसार प्रकृति कभी उनके अनुकूल, कभी प्रतिकूल और कभी तटस्थ दिखाई देती है । इन वर्णनों में वृन्दावनलाल वर्मा के उपन्यासों सौन्दर्य में अभिवृद्धि हुई है । मुख्य रूप से प्रकृति का वर्णन कालबोध तथा स्थान-बोध के लिए किया गया है । बाद के उपन्यों में उपन्यासकार की प्रकृति की पकड़ ढ़ीली पड़ गई है । लोकेतर सन्दर्भ में प्रकृति का विशद वर्णन किया गया है ।

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न न होते हुए भी बुन्देलखण्ड का 'लोक' यहां की नदियों के पानी से ही विशेष शक्ति, उत्साह एवं स्वाभिमान को प्राप्त किए हुए है । जंगली जानवरों का मांस, फल-फूल ही उनका भोजन है । वृक्षों के पत्ते, छाल, 'कुर्ता-सलूका', 'घूटन्नू-धोती', 'साफा', 'धोती', साड़ी-ओढ़नी, चोली-कुंचुकी, लहंगा-चुन्हरी आदि साधारण मोटे-झोटे कपड़ों में यहाँ के नर-नारी अपने रूप एवं शौर्य बड़े-बड़े राजाओं को भी आकर्षित कर लेते है । घास-फूस, खपरैल की झोंपड़ियां ही इनका आवास है तथा खेती-पाती, मेहनत-मजदुरी, जंगली जानवरों का शिकार आदि इनके मुख्य व्यवसाय है । इ दरिद्राव्था में भी ये बीहड़ जंगलों में घूमते हुए, नदियों के किनारे, तपती दुपहरी में फाग तथा रारे गाते हैं । मस्ती की मोज में गाते हुए इनका उत्साह दुगुने वेग से प्रकट होता है । अर्धनग्न एवं भूखे रहकर भी स्वाभिमान के कारण किसी के आगे हाथ नहीं फैलाते है । परन्तु पूर्वजों की परम्परा से प्राप्त रीति-रिवाजों के आगे ये घुटने टेक देते है । इनके लिए रीति-रिवाज देवताओं की तरह पूज्य है । परन्तु पर्दा, दहेज, अनमेल विवाह, बहुविवाह, हड़ैती जैसी कुरीतियों का उपन्यासकार ने सबब पात्रों द्वारा विरोध कराया है । बुन्देलखण्ड के 'लोक' के भोजन, वेशभूषा, आवास, व्यवसाय तथा रीति-रिवाजों के वर्णन से उनकी जीवन-यापन-विधि पूर्णतः उजागर हुई है । इसे उपन्यासों की स्वाभाविकता में अभिवृद्धि हुई है तथा उपन्याकार आदर्शोन्मुख यथार्थवादी दृष्टि की झलक भी मिल जाती है ।

मानव-जीवन में जब कोई आनन्द उपलब्ध नहीं होता तब धर्माचरण और कर्तव्यपालन ही चित्त को शान्ति देता है । मानव तरह-तरह के भयों से घिरा हुआ है । ये भय उसके अन्धविश्वासों का मूल है । बुन्देलखण्ड के सामान्य लोग धर्मभीरु है । उनकी धर्म-भावना दुर्गा-

माता, शिव, भैरव आदि देवी-देवताओं की पूजा अर्चा के माध्यम से प्रकट हुई है । व्रत, दान, नदी-स्नान आदि उनके धार्मिक जीवन के अभिन्न अंग है । उनकी चिन्तन-विधि, लोक-विश्वासों, मान्यताओं-मुहूर्त, शकुन-अपशकुन, ज्योतिष, भूत-प्रेत सम्बन्धी विश्वास, शपथ-कौल, स्वप्नविश्वास आदि में भी अभिव्यक्त हुई है । इससे उनके के हृदय में छाए-हुए भयों का पता चलता है । इनका मूल कारण भ्रम है और कुछ नहीं । उनकी मानसिक एवं हृदय-गत संकीर्णता उनकी जात-पात विषयक कट्टरता में स्पष्ट दिखाई देती है । लोग धर्मपरायण होने के साथ अन्धविश्वासी हैं । इससे पता चलता है कि बुन्देलखण्ड कितना पिछड़ा हुआ प्रदेश है ।

'लोक' का जीवन विज्ञापन से अप्रभावित होने के कारण मनोरंजन के आधुनिक साधनों से प्रायः शून्य-सा है । वृन्दावनलाल वर्मा के पात्र अपनी देशीय संस्कृति और प्रकृति से प्रेरित होकर मेले-उत्सवों, गीत-संगीत, चित्रकला आदि विभिन्न ललित कलाओं, अनेक खेल-तमाशों – कबड्डी, कसरत कुश्ती, तैराकी, गुल्ली-डण्डा, शतरंज-चोसर, छुआ-छुवोअल, गोट, गरमागोटी, नौटंकी, नट-नटनियों के खेल आदि तथा शिकार के आयोजन से स्फूर्ति एवं नवशक्ति प्राप्त करते हैं । ये मेले, खेल, शिकार आदि मनोरंजन के साधन उनके जीवन के अभिन्न अंग हैं । वे वर्ष भर विभिन्न मेलों के आयोजन में लगे रहते हैं । इससे उन्हें मानसिक सन्तुष्टि एवं स्फूर्ति मिलती है । खेल-तमाशों तथा शिकार के आयोजन से वे अपनी धमनियों में नई शक्ति अनुभव करते हुए, संघर्षमय जीवन को अच्छी तरह जीने के लिए उत्साह से भर जाते हैं । मेले-उत्सवों पर देवी-देवताओं के लोक-गीत गाते हुए लोगों का हृदय श्रद्धा से भर जाता है । उनके नीरस जीवन में सरसता छा जाती है ।

कला 'लोक' की आत्मा की अभिव्यक्ति है, उसकी चिरन्तन साधना की चरमोपलब्धि है । वह उसे सदा शक्ति, स्फूर्ति तथा उत्साह प्रदान करती रहती है । गीत-संगीत से पशु तक प्रभावित हो जाते हैं, फिर मानव का तो कहना ही क्या । उपन्यासकार वृन्दावनलाल वर्मा के उपन्यासों में कला के उत्कर्ष के थ कर्तव्यपालन पर भी वेष बल दिया है । उनके पात्र संगीतकला के अतिरिक्त वास्तुकला, मूर्तिकला एवं चित्रकला के भी प्रेमी है । ये कलाएं उनका मनोरंजन करती हुई उन्हें जीने की राह दिखाती है तथा उनके मनोबल को बनाए रखती है । मनोरंजन के साधन लोक को सहज ही प्राप्त हैं । इसीलिए उपन्यासकार ने प्रत्येक उपन्यास में इनके वर्णन से लोक-जीवन की स् झांकी प्रस्तुत की है । उपन्यासों में ये वर्णन वृक्षों के पत्तों से व्याप्त हरियाली के समान पाठकों को ताजगी प्रदान करते हैं । इनके बिना लोक-जीवन की अभिव्यक्ति अधूरी एवं अस्वाभाविक होती, ऐतिहासिक उपन्यास मात्र इतिहास-वर्णन रह जाते तथा सामाजिक उपन्यास अपनी अर्थवत्ता खो बैठते है । लोकेत्तर सन्दर्भ में भी इनका वर्णन किया गया है ।

उपन्यासकार ने अपने उपन्यासों में बुन्देलखण्डी लोक-जीवन की अधिक जीवन्त बनाने के लिए ऐसे पात्रों का चित्रण किया है जो अपनी बोली-बानी का प्रयोग करते हैं । अर्जुन कुम्हार, किसान बुद्धा, पैलू, 'विराटा की पद्मिनी' का किसान और उसका चरवाहा लड़का, 'झांसी की रानी-लक्ष्मीबाई' की झलकारी कोरिन, 'कचनार' उपन्यास के गोसाई आदि बुन्देली भाषा में बातचीत करते हुए वातावरण में सजीवता एवं स्वाभाविकता का रंग भर देते है । इन के संवादों से इनकी

सरलता, स्वाभिव्यक्ति, निर्भीकता, चतुरता, घृष्टता, स्पष्टवादिता, धर्मभावना, उज्जड़ता आदि विभिन्न मनोवृत्तियों का पता चलता है । उपन्यासकार ने बाद के उपन्यासों में बुन्देली संवादों का प्रयोग न करके अनेक स्थानों पर खड़ीबोली के साथ स्थानीय शब्दों का प्रयोग किया है । इन शब्दों का प्रयोग अत्यन्त स्वाभाविक एवं सटीक है । पाठक सरलता से प्रसंग के अनुसार उनका अर्थ जान लेता है । इन शब्दों का प्रयोग भौगोलिक वर्णनों, खेती-पाती, रीति-रिवाजों, शिकार आदि के प्रसंगों में पर्याप्त रूप में किया गया है । संज्ञा, क्रिया-विशेषण के रूप में बुन्देली शब्द प्रचुर मात्रा में प्रयुक्त हुए हैं । उन से उपन्यासकार के भावों को मूर्त रूप दिया है तथा हिन्दी भाषा की श्री-वृद्धि हुई है । बुन्देली लोक-गीतों में हृदय की सरस एवं निश्छल अभिव्यक्ति हुई हैं । इस प्रकार वृन्दावनलाल वर्मा के उपन्यासों में चित्रित लोक-जीवन प्रकृति, जीवनयापन-विधि, लोक-चेतना, मनोरंजन-विधियों तथा लोकभाषा के विविध तन्तुओं के तान-बाने से सुनकर इन्द्रधनुषी आकर्षक रंगों में प्रस्तुत किया गया है ।

पूर्व पृष्ठों में वृन्दावनलाल वर्मा के उपन्यासों में लोक-जीवन की सरस, सजीव, सफल, स्वाभाविक, साहित्यिक अभिव्यक्ति तथा इसमें उनकी रचना-प्रक्रिया का आद्योपान्त वर्णन किया जा चुका है । अब उनकी उपलब्धि तथा उपन्यास-जगत् में उनके प्रभाव और लोक-जीवन की दृष्टि से भविष्य में उनके महत्व, भावी शोध की संभावनाओं आदि पर विचार करना है । वृन्दावनलाल वर्मा विगंत-कल, वर्तमान-आज और भविष्य-कल के आस्थावान् कलाकार हैं । उन्होंने बुन्देलखण्ड के इतिहास और समाज की कलात्मक रूप देते हुए अतीत को वर्तमान के साथ जोड़ कर भविष्य के लिए प्रस्तुत किया है ।

वृन्दावनलाल वर्मा ने अपने ऐतिहासिक एवं सामाजिक उपन्यासों द्वारा बुन्देलखण्ड के इतिहास और समाज की गौरवान्वित किया है, उसे एक नई दिशा दी है । उन्होंने न केवल बुन्देलखण्डी बल्कि समस्त मानव-समाज को स्वच्छ एवं परिष्कृत जीवन-दष्टि प्रदान की है । बुन्देलखण्ड के विषय में फैली हुई भ्रामक धारणाओं को काल के गर्भ में विलोम ऐतिहासिक तत्वों की खोज में निर्मूल सिद्ध किया है । साथ ही उन्होंने हिन्दी में ऐतिहासिक उपन्यासों के अभाव को पूर्ण करते हुए ‘हिन्दी साहित्य की श्री-वृदधि की है । अपने विराट एवं अदभूत व्यक्तित्व के अनुरूप ही उन्होंने हिन्दी साहित्य-जगत् की गद्य की भिन्न-भिन्न विधाओं से सेवा की है । साहित्यकार वृन्दावनलाल वर्मा ने उपन्यास, कहानी, नाटक, एकांकी, संस्मरण इन सभी रूपों में हिन्दी गद्य को समृद्ध किया है । परन्तु इस क्षेत्र में उनकी विशिष्ट देन उपन्यास की है । ऐतिहासिक उपन्यासकारों में वे सर्वोपरि है । इसका यह अभिप्राय नहीं कि सामाजिक उपन्यासकार के रूप में उनका कोई महत्व नहीं है । ऐतिहासिक उपन्यासों की तहत उनके कुछ सामाजिक उपन्यास बेजोड़ हैं । इनमें कथानक का सहज प्रवाह है जो सरल एवं स्वाभाविक गति से अग्रसर होता हुआ अपने कथ्य को प्रकट करता है । इनमें बुन्देलखण्डी जन-जीवन अभिव्यक्ति है तथा भावी आंचलिक उपन्यासों के बीज निहित है । लोक-दृष्टि में उनके ऐतिहासिक एवं सामाजिक उपन्यासों का किसी एक अथवा अनेक तत्वों के आधार पर अन्य उपन्यासकारों से तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है । इसके अतिरिक्त उनके उपन्यासों में चित्रित लोक-जीवन की बुन्देलखण्ड के वास्तविक जन-

जीवन से तुलना भी की जाती हैं । ड्यूमा और वाल्टर स्काट की रचनाओं से प्रभावित वृन्दावनलाल वर्मा के उपन्यास उनसे तुलनात्मक अध्ययन के लिए विस्तृत आधार प्रस्तुत करते हैं । इस प्रकार लेखक के उपन्यासों को अन्तर्राष्ट्रीय कथा-साहित्य में प्रतिष्ठित किया जा सकता है । अतः प्रस्तुत अध्ययन वृन्दावनलाल वर्मा के उपन्यासों का विश्व-लोक-संस्कृति के सन्दर्भ में मूल्यांकन करने का मार्ग प्रशस्त करता है । निष्कर्ष यह है कि वृन्दावनलाल वर्मा एक आस्थावान कलाकार हैं जिन्होंने बुन्देलखण्ड के इतिहास और समाज को कलात्मक रूप प्रदान करते हुए अतीत को वर्तमान के साथ जोड़ कर भविष्य के लिए प्रस्तुत किया है ।

उपन्यासकार वृंदावनलाल वर्मा ने हिन्दी सहित जत को विविध उपन्यासों के द्वारा समृद्ध किया है । उपन्यास के लेखन के क्षेत्र में वर्माजी का महत्त्वपूर्ण योगदान है । हिन्दी साहित्य जगत सदैव वर्माजी के अमूल्य योगदान को स्मरण रखेगा ।

डॉ. प्रेमसिंह के. क्षत्रिय
अध्यापक अहमदाबाद
5, फौजदार न्यू पार्क,
सैजपुर-बोघा,
नरोडा रोड,
अहमदाबाद-382345

संदर्भ साहित्य

1. गढ़ कुण्डार, वृन्दावनलाल वर्मा, मयूर प्रकाशन, झाँसी, द्वितीय संस्करण, 1962
2. झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई, वृंदावनलाल वर्मा, मयूर प्रकाश, झाँसी, चतुर्थ संस्करण-1952
3. ऐतिहासिक उपन्याकार वृंदावनलाल वर्मा, डॉ. गोपीनाथ तिवारी, सरस्वती पुस्तक सदन, आगरा, प्रथम संस्करण-2015
4. प्रेमचंदपूर्व हिन्दी उपन्यास, डॉ. कैलाश प्रकाश, हिन्दी साहित्य संसार, पटना, प्रथम संस्करण-1962
5. बुंदेलखंड की संस्कृति और साहित्य, रामचरण हरायण मिश्र, हिन्दी साहित्य कुटीर, वाराणसी, चतुर्थ संस्करण-2
6. वृंदावनलाल वर्मा व्यक्तित्व और कृतित्व, डॉ.पदमसिंह शर्मा, बंसल एण्ड कंपनी, दिल्ली